कृषि ऋण - उपलब्धि और चुनौतियाँ*

दुव्वुरी सुब्बाराव

मुझे नाबार्ड के गठन के तीस वर्ष पूरा होने पर आयोजित समारोह में भाग लेने पर बहुत हर्ष हो रहा है। निस्संदेह, यह नाबार्ड के लिए एक विशेष अवसर है; लेकिन यह रिज़र्व बैंक के लिए भी विशेष अवसर है, क्योंकि वर्ष 1982 में एक स्वतंत्र विकास वित्तीय संस्था के रूप में शुरुआत के पूर्व इस पर रिज़र्व बैंक में चिंतन-मनन किया गया था। हमारी दोनों संस्थाओं के बीच का बंधन न केवल सुदृढ़ बना हुआ है, बल्कि यह और भी सुदृढ़ होता जा रहा है। हम एक समान लक्ष्य को साझा करते हैं - समावेशी वृद्धि के कार्य को आगे बढ़ाने का। हम महत्त्वपूर्ण व्यावसायिक डोमेन भी साझा करते हैं, जिसका कारण है कृषि ऋण के प्रवाह के लिए हमारा उत्तरदायित्व।

I. नाबार्ड

2. पिछले तीन दशकों में नाबार्ड एक-आयामी शीर्ष वित्तपोषण एजेंसी से आगे बढ़ कर देश की समग्र ग्रामीण ऋण नीति को आकार देने और क्रियान्वित करने वाली बहुआयामी संस्था के रूप में विकसित हुआ है। नाबार्ड एसएचजी-बैंक सहबद्धता कार्यक्रम के माध्यम से व्यष्टि-वित्त का संवर्धन करने में अगुआ बना हुआ है। इस कार्यक्रम में विराट ऊर्जा और श्रम-शक्ति लगाते हुए और अपनी अनेक भूमिकाओं का निर्वाह करते हुए नाबार्ड लगभग 97 मिलियन परिवारों तक पहुँचा है और भारत के व्यष्टि-वित्त कार्यक्रम को दुनिया का सबसे तेज गति से फैलने वाला, यदि सबसे बड़ा न भी हो, कार्यक्रम बना दिया है। आप सभी नाबार्ड के प्रबंधक-वर्ग और स्टाफ - जिनमें सेवानिवृत्त हो चुके लोग शामिल हैं, नाबार्ड की इस विश्वास-योग्य उपलब्धि के लिए गौरवान्वित हो सकते हैं। इस महान संस्था की सेवा इतनी सक्षमता से करने के लिए मैं आप सबों को बधाई देता हूँ।

3. तीन दशक पूरा कर लेने पर यह उत्सव मनाने का अवसर है; यह आत्म-निरीक्षण के लिए भी एक अवसर है - ताकि आप पीछे मुड़ कर देखें कि आपने क्या उपलब्धि प्राप्त की है और आपके सामने कौन-सी चुनौतियाँ आने वाली हैं। मैंने सोचा कि नाबार्ड के इस उत्सव में मैं अपना योगदान देने के लए पीछे मुड़ कर देखूँ और आगे कृषि ऋण के क्षेत्र में, जो नाबार्ड के अधिदेश का सार-तत्व है, आने वाली चुनौतियों पर चर्चा करूँ।

* नाबार्ड के तीसवें वार्षिकोत्सव के अवसर में मुम्बई में 12 जुलाई 2012 को डॉ.दुव्वुरी सुब्बाराव, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दिया गया भाषण।

II. कृषि-ऋण का महत्त्व

4. स्वतंत्रता के शीघ्र बाद पंडित नेहरू के प्रबोधन से आरंभ करते हुए कि 'किसी भी अन्य चीज के लिए प्रतीक्षा की जा सकती है, लेकिन कृषि के लिए नहीं', गरीबी कम करने की दिशा में भारत के प्रयासों का केंद्रविन्दु कृषि का विकास रहा है। हम खाद्यान्न की चिरकालिक कमी और स्वतंत्रता के ठीक बाद की अवधि में कभी-कभार पड़ने वाले अकाल के समय से बहुत आगे निकल चुके हैं; आबादी बढ़ने के बावजूद हमने सघन खेती और उत्पादकता में सुधार, दोनों के माध्यम से खाद्यान्न में आत्मनिर्भर होने में सफलता पायी है। लेकिन हाल के वर्षों में, खाद्यान्न आत्मनिर्भरता के स्तर में कभी होते जाने के बारे में चिंता बढ़ती रही है। खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता बनाये रखने के लिए एक बड़ी चुनौती यह है कि उत्पादन बढ़ाया जाये, जो यह देखते हुए कि उपलब्ध भूमि-क्षेत्र निश्चित है, भले ही उसमें कोई कमी नहीं आये, उत्पादकता में सुधार से प्राप्त किया जा सकता है। उत्पादकता में सुधार के लिए नकदी और नकदी से इतर निविष्टियों की आवश्यकता है, और एक महत्त्वपूर्ण निविष्टि है कृषि ऋण।

5. विकास संबंधी अनुभव यह दर्शाता है कि कृषि में मूल्यवर्धन का एक महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्व ऋण होता है। कृषि को दिये गये संस्थागत ऋण (वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी संस्थाओं और आरआरबी से) के बीच संबंध का मूल्यांकन रिज़र्व बैंक द्वारा किये जाने पर यह स्पष्ट हुआ कि इसमें सकारात्मक और सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण लोच है - वास्तविक कृषि ऋण में प्रत्येक बार 1 प्रतिशत वृद्धि होने का परिणाम यह होता है कि 1 वर्ष के अंतराल[1] में वास्तविक कृषि-जीडीपी में 0.22 प्रतिशत की वृद्धि होती है। पुनः, ग्रैंजर कारकत्व परीक्षण

[1] इस अध्ययन में आँकड़े वर्ष 1990 /91 और उसके बाद से लिये गये हैं।
इस मॉडल को निम्नलिखित रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है :

$$Ln\,(AGDP) = 10.52 + 0.22Ln\,(Acredit(-1))$$
$$(22.89)^{*}\ (5.61)^{*}$$
$$Adj\ R^2 = 0.91\quad DW = 1.52$$

जहाँ AGDP = स्थिर कीमतों पर कृषि और संबद्ध कार्यकलापों से जीडीपी
Acredit = कृषि और संबद्ध कार्यकलाप के लिए ऋण, जिसे एक वर्ष के अंतराल के साथ जीडीपी डिफ्लेटर से डफ्लेट किया गया

* महत्त्व के 1 प्रतिशत पर महत्त्व

हालाँकि युनिट रूट टेस्ट से पता चला कि दोनों श्रृंखलाएँ क्रम 1 में स्वीकृत थी, हमने लोच अनुमान को प्रस्तुत करने के लिए परंपरागत बॉक्स-जेन्किन्स कार्यप्रणाली को श्रृंखला में विभेद करने के लिए नहीं अपनाया। इसके बदले हमने 'टी' स्टैटिस्टिक्स को प्रस्तुत किया है, जो स्वतः सहसंबंध के लिए तगड़े होते हैं और इसके लिए हमने वे वेस्ट कार्यप्रणाली का प्रयोग किया है।

(1 के लैग-लेंथ पर आधारित) बताता है कि कारणत्व भी कृषि ऋण से कृषि जीडीपी तक एकदिशीय था।

III. पीछे मुड़ कर देखना -कृषि-ऋण का संवर्धन करने के लिए प्रमुख नीतियाँ

6. आगे की ओर देखने के लिए यह शिक्षाप्रद होगा कि हम पीछे मुड़ कर उन नीतियों पर दृष्टिपात करें, जिन्होंने पिछले 60 वर्षों में कृषि-ऋण के प्रवाह को आकार दिया है।

7. स्वतंत्रता के बाद के पहले दो दशकों में, कृषि को संस्थागत ऋण उपलब्ध कराने का माध्यम सहकारी क्षेत्र होता था। हालाँकि इसकी अवधारणा ठोस थी, फिर भी सहकारी क्षेत्र उम्मीदों पर खरा नहीं उतर सका। वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद 1970 के दशक में कृषि-ऋण के क्षेत्र में वाणिज्यिक बैंकों का प्रवेश हुआ। इस अवधि में अग्रणी बैंक योजना आरंभ की गयी और प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार के लिए विनियामक निर्धारण किये गये - ये दो नीतियाँ विकास के लिए ऐतिहासिक कही जा सकती हैं, जिनका अस्तित्व आज भी बना हुआ है। 1970 के दशक में लघु और सीमांत कृषकों को ऋण देने के लिए विशेषीकृत एजेंसी दृष्टिकोण का प्रमुख रूप से प्रयोग किया गया। लघु कृषक विकास एजेंसी (एसएफडीए) और सीमांत कृषक और खेतिहर मजदूर विकास एजेंसी (एमएफएएलडीए), जिन्हें देश के चुने हुए जिलों में प्रायोगिक आधार पर आरंभ किया गया था, को बाद में जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों के रूप में देश भर में विस्तारित किया गया और अब वे जिला-स्तर पर अनेक गरीबी उन्मूलन उपक्रमणों का समन्वय और प्रबंध करने के कार्य में केंद्रीय भूमिका निभा रही हैं।

8. 1990 के दशक का आर्थिक सुधार कार्यक्रम, जो पहली नरसिंहम समिति के साथ आरंभ किया गया था, ने वित्तीय क्षेत्र, जिनमें ग्रामीण वित्तीय संस्थाएँ शामिल हैं, की सुदृढ़ता और परिचालन-दक्षता पर जोर दिया था। रिज़र्व बैंक ने धीरे-धीरे ब्याज दर को अविनियमित किया, ताकि बैंकों की परिचालन-दक्षता में सुधार हो। अगले दो दशकों में कृषि ऋण में अनेक महत्त्वपूर्ण नवोन्मेष होते देखे गये।

- कृषि के लिए प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों प्रकार के ऋणों को प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के रूप में मान्यता दी गयी, अलबत्ता अप्रत्यक्ष ऋण की कुछ सीमा बाँधी गयी। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ऋण के भीतर जो कुछ भी शामिल किया गया, उसमें बाद में बदलती जरूरतों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर संशोधन किया जा रहा है।
- वर्ष 1995 के आरंभ से जो बैंक प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र /कृषि / कमजोर वर्ग के लिए उधार का अपना लक्ष्य पूरा नहीं करते थे, उन्हें कमी की राशि नाबार्ड द्वारा स्थापित ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ) में जमा करनी पड़ती थी। आरआइडीएफ में जमा निधियाँ राज्य सरकारों को उधार दी जाती हैं, ताकि वे ग्रामीण आधारभूत संरचना का वित्तपोषण कर सकें।
- वर्ष 1994-95 से, वाणिज्यिक बैंकों को निर्धारित वार्षिक वृद्धि दरों के साथ विशेष कृषि ऋण योजनाएँ तैयार करनी होती हैं।
- वर्ष 1989 में नाबार्ड ने किसान क्रेडिट कार्ड (केसीसी) आरंभ किया, जिसका उपयोग कोई किसान उत्पादन संबंधी सभी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, उत्पादन चक्र के माध्यम से लगभग माँग के अनुसार प्राप्य आधार पर ऋण का आहरण कर सकता है। इस प्रकार, केसीसी किसान और बैंक, दोनों के लिए लेन-देन की लागत कम करने का एक सशक्त तंत्र सिद्ध हुआ है।
- वर्ष 2004 में एक ‘व्यापक ऋण नीति’ की घोषणा की गयी, जिसमें इस बात को अनिवार्य बनाया गया कि प्रत्येक वर्ष कृषि को संस्थागत ऋण में 30 प्रतिशत की वृद्धि की जाये। बैंकों को भी आदेश दिया गया कि वे यह सुनिश्चित करें कि प्रत्येक शाखा प्रत्येक वर्ष कम से कम 100 किसानों का (समग्र स्तर पर किसानों की कुल संख्या 5 मिलियन) और कम से कम दो या तीन कृषि परियोजनाओं का वित्तपोषण करती है। इस नीति में अनेक ऋण राहत उपायों को भी शामिल किया गया, यथा, ऋण-पुनर्संरचना, एकबारगी निपटान और साहूकारों से लिये गये उधारों को चुकाने के लिए ऋण।
- किसानों को दिये गये अल्पावधि ऋण के संबंध में एक ब्याज अनुदान योजना वर्ष 2006 /07 में आरंभ की गयी। वर्ष 2011 /12 के बजट में 3 प्रतिशत के अतिरिक्त अनुदान की घोषणा की गयी, ताकि किसानों द्वारा तत्परतापूर्वक ऋण की चुकौती की जा सके।
- पिछले दशक ने संयुक्त देयता समूहों (जेएलजी), ‘एग्रिगेशन मॉडलों’ के माध्यम से किसानों का वित्तपोषण किये जाने के संदर्भ में नवोन्मेष, और प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पीएसीएस) को बहुविध सेवा केंद्रों के रूप में विकसित किये जाने को देखा है, जो विशेष रूप से लघु और सीमांत कृषकों की ऋण एवं ऋण से इतर जरूरतों को पूरा करते हैं।

IV. कृषि ऋण के प्रवाह में विकसित होता पैटर्न

9. कृषि ऋण को आकार देने वाली नीतियों की ओर दृष्टिपात कर लेने के बाद अब मैं उन नीतियों के व्यापक निष्कर्षों को आलोकित करना चाहूँगा।

(i) ग्रामीण ऋण में औपचारिक संस्थागत संरचना की बढ़ती भूमिका

10. वर्षों से, खेतिहर परिवारों द्वारा उपभोग किये गये ऋण में औपचारिक वित्तीय संस्थाओं (वाणिज्यिक बैंक, आरआरबी और सहकारी संस्थाएँ) के हिस्से में उल्लेखनीय बढ़ोतरी होती रही है। 1950 के दशक में गैर संस्थागत स्रोत, विशेष रूप से साहूकार, खेतिहर परिवारों द्वारा लिये गये वस्तुतः सभी ऋणों के लिए जिम्मेवार होते थे, जिसमें औपचारिक संस्थागत संरचना से लिया गया ऋण नगण्य होता था। यह स्थिति 1980 के दशक के आरंभ में नाटकीय रूप से बदल गयी, जब औपचारिक वित्तीय संस्थाएँ कुल ऋण के 60 प्रतिशत तक के लिए जिम्मेवार होने लगी (सारणी 1)[2]

11. कृषि ऋण में औपचारिक संस्थागत ऋण में क्रमिक वृद्धि को वर्ष 1991 और 2002 के बीच की अवधि में पलटी मारते देखा गया, जिसका मुख्य कारण था वाणिज्यिक बैंकों द्वारा अपना पाँव पीछे हटा लेना। यह चिंताजनक प्रवृत्ति, अंशतः, 1990 के दशक में ग्रामीण शाखा नेटवर्क के संकुचन के कारण और अंशतः स्रोतों की क्रियाविधियों और प्रणालियों में सामान्य कठोरता के कारण बनी।[3]

12. क्या वर्ष 2002 के बाद इस प्रवृत्ति में निश्चित तौर पर परिवर्तन हुआ है? इसे जानने के लिए हमें अखिल भारतीय ऋण और निवेश सर्वेक्षण (एआइडीआइएस) के आने वाले नतीजों की प्रतीक्षा करनी होगी, ताकि इस बात का सत्यापन हो सके कि क्या 2000 के दशक में ग्रामीण शाखा नेटवर्क का विस्तार करने और कृषि ऋण में बढ़ोतरी करने के लिए किये गये अनेक नये उपक्रमणों के परिणामस्वरूप वाणिज्यिक बैंकों ने वह स्थान पुनः प्राप्त कर लिया है, जिसे उन्होंने कृषि ऋण के क्षेत्र में खाली कर दिया था।

सारणी 1 : कुल ऋण में खेतिहर परिवारों का हिस्सा

(प्रतिशत)

ऋण का स्रोत	1951	1961	1971	1981	1991	2002
संस्थागत,	7.3	18.7	31.7	63.2	66.3	61.1
जिनमें से						
सहकारी समितियाँ /बैंक	3.3	2.6	22.0	29.8	23.6	30.2
वाणिज्यिक बैंक	0.9	0.6	2.4	28.8	35.2	26.3
गैर-संस्थागत	92.7	81.3	68.3	36.8	30.6	38.9
जिनमें से						
साहूकार	69.7	49.2	36.1	16.1	17.5	26.8
अविनर्दिष्ट	–	–	–	–	3.1	–
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

स्रोत :अखिल भारतीय ऋण एवं निवेश सर्वेक्षण, एनएसएसओ, भारत सरकार, विविध दौर।

(ii) कृषि ऋण की मात्रा को बढ़ाना

13. पिछले 40 वर्षों में, कृषि ऋण की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जैसाकि कृषि जीडीपी में कृषि ऋण के अनुपात से मापा गया है। कृषि ऋण की मात्रा, जो 1970 के दशक में 12 प्रतिशत थी, वह वर्ष 2010 /11 तक बढ़ कर 67 प्रतिशत हो गयी (चार्ट 1)।

चार्ट 1 : कृषि में ऋण की मात्रा

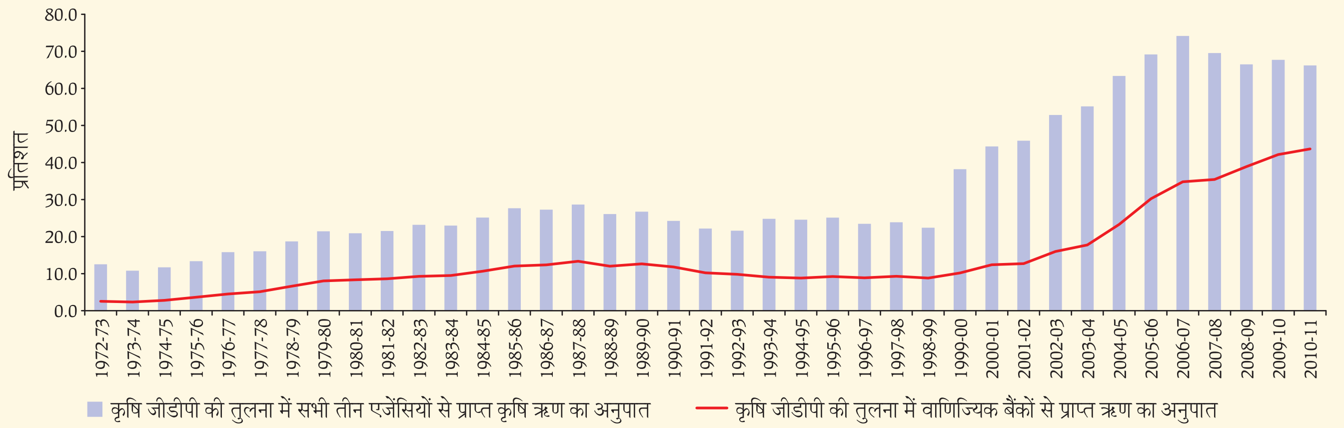

नोट : चूँकि सहकारी संस्थाओं से कृषि ऋण के संबंध में केवल वर्ष 2007 /08 तक के आँकड़े उपलब्ध हुए,, अतः वर्ष 2008 /09 और 2010 /11 के बीच आँकड़ों का अनुमान तीन वर्षीय चल औसत पद्धति के आधार पर लगाया गया है

स्रोत:हैडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी, आरबीआई (2010-11)

[2] ये आँकड़े खेतिहर परिवारों द्वारा उत्पादन और उपभोग, दोनों प्रयोजनों के लिए सिये गये ऋण की पूरी राशि के संबंध में हैं। केवल उत्पादन के प्रयोजन के लिए लिये गये ऋण के आँकड़े उपलब्ध नहीं है। फिर भी इससे पैटर्न में व्यापक बदलाव के बारे में अनुमान में परिवर्तन नहीं होता है।

[3] इन कारणों का वर्णन नाबार्ड (2010) के रिपोर्ट ऑफ दि टास्क फोर्स ऑन क्रेडिट रिलेटेड इश्युज ऑफ फार्मर्स में किया गया है

14. 1970 के दशक और वर्ष 2010 के बीच, ऋण-मात्रा की प्रवृत्ति में वस्तुतः तीन सुभिन्न चरण देखने को मिलते हैं। पहले चरण में, जो 1970 के दशक के प्रारंभ से 1980 के दशक के मध्य तक का है, ऋण-मात्रा में संयत वृद्धि देखी गयी। दूसरे चरण में 1980 के दशक के मध्य से 1990 के दशक के अंत तक गिरावट की प्रवृत्ति देखी गयी। यह वह अवधि थी, जब खेतिहर परिवारों के कुल ऋण में संस्थागत स्रोतों का हिस्सा कम हो रहा था, जैसाकि सारणी 1 में एआइडीआइएस के आँकड़े में बताया जा चुका है। तुलनात्मक दृष्टि से, तीसरे चरण में, जो वर्ष 2000 से आरंभ हुआ, कृषि ऋण की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि देखने को मिलती है।

(iii) कुल कृषि ऋण में वाणिज्यिक बैंकों का हिस्सा 1980 के दशक से बढ़ना आरंभ हुआ

15. कृषि ऋण के संस्थागत स्रोतों में सहकारी संस्थाएँ सबसे पुराने स्रोत रही हैं और लंबे समय तक वे प्रधान स्रोत बने रहे। बैंकों के राष्ट्रीयकरण से प्रारंभ करते हुए वाणिज्यिक बैंक धीरे-धीरे कृषि ऋण के महत्त्वपूर्ण स्रोत बन गये हैं, हालाँकि उनके हिस्से में वृद्धि समरूप नहीं रही है (चार्ट 2)।

16. 1980 के दशक के प्रारंभ में, सहकारी संस्थाएँ कुल संस्थागत ऋण के आधे हिस्से की आपूर्ति करती थीं, जबकि वाणिज्यिक बैंकों का हिस्सा लगभग 40 प्रतिशत था और आरआरबी का केवल 2 प्रतिशत के आसपास था[4]। वाणिज्यिक बैंकों का हिस्सा पूरे 1980 के दशक के दौरान निरंतर बढ़ा और और सहकारी संस्थाओं के हिस्से से आगे निकल गया। तथापि, इस प्रवृत्ति में 1990 के दशक में प्रत्यावर्तन हुआ, जब वाणिज्यिक बैंकों के हिस्से में गिरावट आयी। इसके लिए संभवतः यह तथ्य जिम्मेवार है कि यह ऐसी अवधि थी, जब पूरे देश में बैंकिंग की व्याप्ति, जिसका मापन ग्रामीण शाखाओं की संख्या और प्रति शाखा औसत आबादी के आधार पर किया जाता है, में गिरावट देखी गयी।

(iv) 2000 के दशक में कृषि के लिए वाणिज्यिक बैंकों के ऋण में तीव्र वृद्धि

17. 1990 के दशक के प्रथमार्ध में कृषि के लिए कुल संस्थागत ऋण में कमी में, जैसाकि ऊपर इंगित किया गया है, 1990 के दशक के उत्तरार्ध में संयत पुनरुत्थान के साथ परिवर्तन होना प्रारंभ हुआ, और उसके बाद 2000 के दशक के प्रथमार्ध में उसमें तीव्र वृद्धि हुई। वर्ष 2005 /06 तक कृषि ऋण में (तीन वर्षीय चल) औसत वृद्धि दो अंकों में देखी गयी, जो प्रति वर्ष 35 प्रतिशत के इर्द-गिर्द बनी हुई थी [चार्ट 3]। इस अवधि के दौरान वाणिज्यिक बैंकों से कृषि ऋण सहकारी संस्थाओं की तुलना में काफी तेज गति से बढ़ा।

(V) कृषि के लिए वाणिज्यिक बैंक ऋण

18. सकल वाणिज्यिक बैंक ऋण की तुलना में कृषि के लिए वाणिज्यिक बैंक ऋण की स्थिति क्या है? उल्लेखनीय रूप से, कृषि के लिए वाणिज्यिक बैंक ऋण, जो 1990 के दशक में कुल बैंक

चार्ट 2 : कुल कृषि ऋण में विभिन्न एजेंसियों के हिस्से

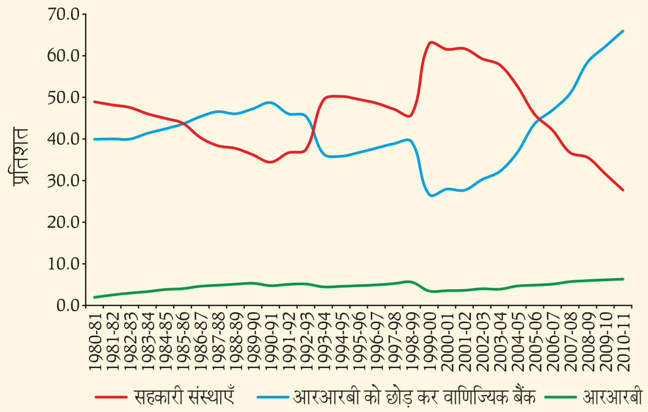

टिप्पणी: चूँकि सहकारी संस्थाओं से कृषि ऋण के संबंध में केवल वर्ष 2007 /08 तक के आँकड़े उपलब्ध हुए,, अतः वर्ष 2008 /09 और 2010 /11 के बीच उनके हिस्से का अनुमान तीन वर्षीय चल औसत पद्धति का उपयोग करते हुए लगाया गया है

स्रोत: हैंडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी, आरबीआई (2010-11)

चार्ट 3 : कृषि ऋण में वृद्धि

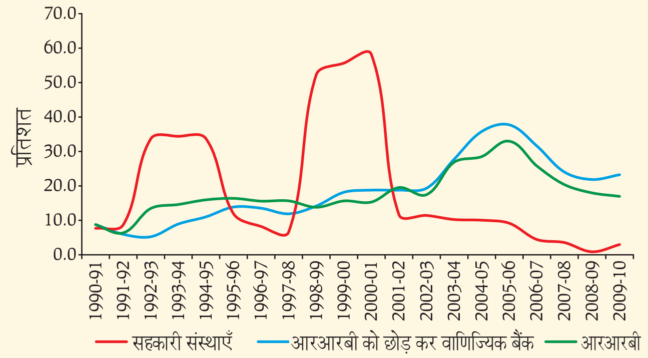

टिप्पणियाँ : (i) प्रस्तुत की गयी वृद्धि दरें तीन वर्षीय चल औसत हैं
(ii) सहकारी ऋण में व्यापक उतार-चढ़ाव सहकारी संस्थाओं से अप्रत्यक्ष कृषि ऋण में परिवर्तनों के चलते हुआ है
(iii) चूँकि सहकारी संस्थाओं से कृषि ऋण के संबंध में केवल वर्ष 2007 /08 तक के आँकड़े उपलब्ध हुए, अतः वर्ष 2008 /09 और 2010 /11 के बीच वृद्धि दरों का अनुमान तीन वर्षीय चल औसत पद्धति का उपयोग करते हुए लगाया गया है

स्रोत: हैंडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी, आरबीआई (2010-11)

[4] ये आँकड़े ग्रामीण विद्युतीकरण निगम (आरइसी) के हिस्से के चलते कुल 100 तक नहीं पहुँचते हैं।

ऋण की तुलना में कम था, 2000 के दशक के प्रथमार्द्ध में तेजी से बढ़ा और ऐसा अधिकतर सकल बैंक ऋण में वृद्धि के साथ-साथ हुआ। वर्ष 2005 /06 के बाद कृषि को वाणिज्यिक बैंक ऋण की वृद्धि में गिरावट देखी गयी, जब सकल बैंक ऋण में भी कमी आयी (चार्ट 4)।

(vi) कृषि को अप्रत्यक्ष ऋण में तेज वृद्धि[5]

19. 1990 के दशक के उत्तरार्ध से, कृषि को अप्रत्यक्ष ऋण में प्रत्यक्ष ऋण की तुलना में तेजी से बढ़ोतरी हुई, जिससे वाणिज्यिक बैंकों द्वारा दिये गये कुल कृषि ऋण में अप्रत्यक्ष ऋण का हिस्सा, जो वर्ष 1995 में लगभग 11 प्रतिशत था, वह वर्ष 2011 तक बढ़ कर 29 प्रतिशत हो गया। 2000 के दशक के उत्तरार्ध में अप्रत्यक्ष ऋण तो प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र दिशा-निर्देशों के अंतर्गत निर्धारित अपनी उप-सीमा से भी, मामूली रूप से, आगे बढ़ गया[6] अप्रत्यक्ष ऋण के बढ़ते महत्त्व की व्याख्या आपूर्ति श्रृंखला आधारभूत संरचना को मजबूत करने के लिए बढ़ती ऋण आवश्यकताओं के प्रतिबिंब के रूप में और परिणामतः अप्रत्यक्ष ऋण की परिभाषा को विस्तृत किये जाने के रूप में की जा सकती है (चार्ट 5)।

चार्ट 4 : वाणिज्यिक बैंक - कृषि ऋण और कुल ऋण में वृद्धि

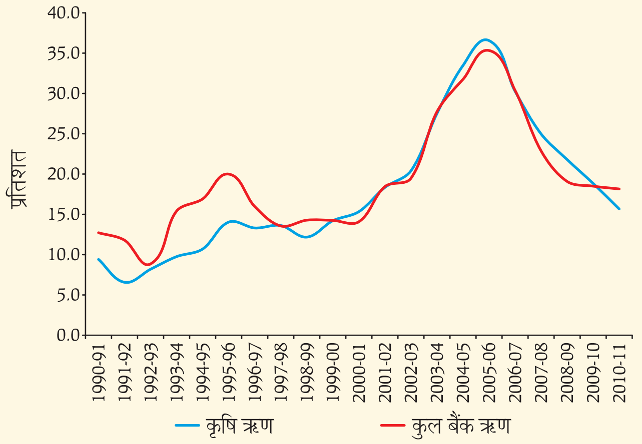

टिप्पणी : यहाँ प्रस्तुत की गयी वृद्धि दरें तीन वर्षीय चल औसत हैं
स्रोत : बैंक ऋण के क्षेत्रीय अभिनियोजन के संबंध में विवरणी। डाटाबेस ऑन इंडियन इकोनॉमी, आरबीआई

चार्ट 5 : प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कृषि ऋण का हिस्सा

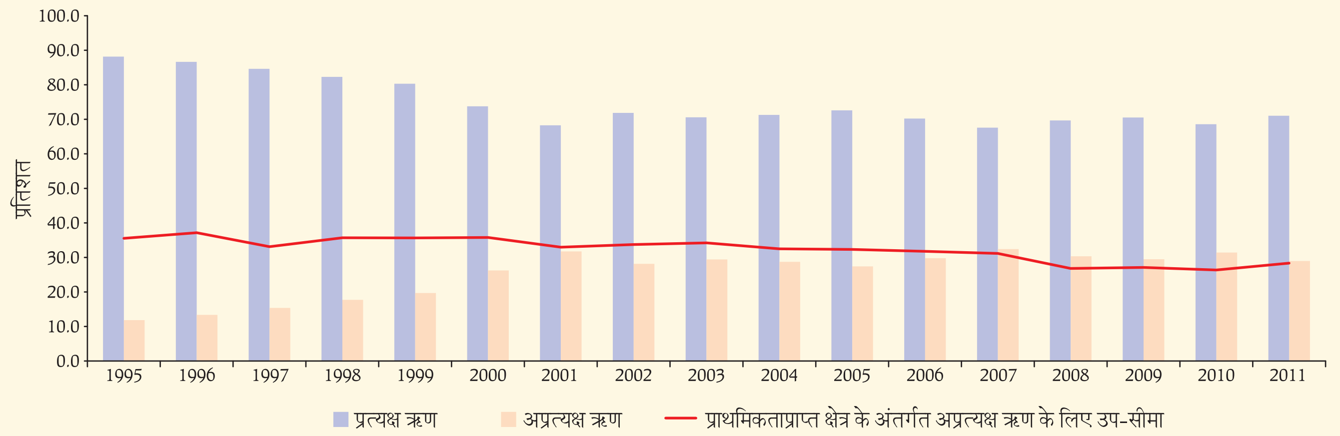

टिप्पणी : चार्ट में, अप्रत्यक्ष कृषि ऋण के लिए उप-सीमा का निर्धारण कुल कृषि ऋण में इसके हिस्से के संदर्भ में किया गया है, ताकि इसे तुलनीय बनाया जा सके। इसकी गणना करने के लिए समायोजित निवल बैंक ऋण (एएनबीसी) के 4.5 प्रतिशत को पहले एएनबीसी के संबंध में वास्तविक आँकड़े को लेते हुए पूर्ण राशि में परिवर्तित किया गया। दूसरे, इस राशि का कुल (प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों) कृषि ऋण में हिस्सा परिकलित किया गया।
स्रोत : अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र विवरणियाँ, आरबीआई

[5] कृषि को अप्रत्यक्ष ऋण में शामिल हैं खाद्य एवं कृषि आधारित प्रसंस्करण इकाइयों को (जिनका प्लांट और मशीनरी में निवेश 100 मिलियन रुपये तक है) दिये गये ऋण, उन सभी कार्यकलापों के लिए दिया गया ऋण, जो डेयरी कारोबार के विकास में योगदान करते हों, उर्वरकों, कीटनाशकों और बीजों की खरीद और वितरण के लिए ऋण, संबद्ध कार्यकलापों (4 मिलियन रुपये तक) के लिए निविष्टियों की खरीद और वितरण के लिए ऋण, ऋणों का दो-तिहाई हिस्सा (10 मिलियन रुपये से अधिक) कारपोरेटों, साझेदारी फर्मों और संस्थाओं को संबद्ध कार्यकलाप के लिए, एग्री क्लिनिक और एग्री बिजनेस केंद्र स्थापित रने के लिए वित्त, कृषि मशीनें और औजार के वितरण के लिए किराया खरीद योजनाओं के लिए वित्त. किसानों को प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पीएसीएस), किसान सेवा समितियों (एफएसएस) और बड़े आकार वाली आदिवासी बहु-उद्देशीय समितियों (एलएएमपीएस), के माध्यम से ऋण, किसानों की सहकारी समितियों को सदस्यों की उपज का निपटान करने हेतु ऋण, स्टोरेज निर्माण और परिचालन के लिए ऋण, कुछ शर्तों के अधीन ड्रिप इरिगेशन स्प्रिंकलर इरिगेशन प्रणाली /कृषि मशीनों के विक्रेताओं को दिया गया वित्त, जनरल क्रेडिट कार्ड के अंतर्गत सामान्य प्रयोजनों के लिए दिये गये ऋण के अंतर्गत बकाया ऋण, कुछ शर्तों के अधीन एमएफआइ को आगे कृषि के लिए उधार देने हेतु दिया गया ऋण, आरआरबी को आगे कृषि और संबद्ध कार्यकलाप के लिए उधार देने हेतु दिया गया ऋण, और ग्रामीण और अर्ध शहरी क्षेत्रों में 'सीमित सुविधा' खातों पर 25,000 रुपये तक (प्रति खाता) ओवरड्राफ्ट।

[6] कृषि को अप्रत्यक्ष ऋण की उप-सीमा प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र दिशा-निर्देशों के अंतर्गत समायोजित निवल बैंक ऋण (एएनबीसी) के 4.5 प्रतिशत पर निश्चित की गयी है। इस उप-सीमा से अधिक अप्रत्यक्ष ऋण की गणना कृषि के लिए 18 प्रतिशत प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र लक्ष्य के अंतर्गत कार्यसंपादन का मूल्यांकन करने के लिए नहीं की जाती है।

(vii) दीर्घावधि कृषि ऋण के हिस्से में कमी

20. 1990 के दशक के आरंभ से कुल कृषि ग्रहण में अल्पावधि कृषि ऋण का हिस्सा बढ़ता रहा है और दीर्घावधि ऋण का हिस्सा घटता रहा है। यह बात घबरा देने लायक तो है, लेकिन आश्चर्यजनक नहीं है, यदि कृषि में धीमे पूँजी-निर्माण को देखा जाये (चार्ट 6)।

(viii) कृषि ऋण का विषम वितरण

21. वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कृषि ऋण का क्षेत्रीय वितरण, ऋण की प्रमात्रा ओर खातों की संख्या, दोनों संदर्भों में विषम रहा है। दक्षिणी राज्यों (आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु) में ऋण का महत्त्वपूर्ण संकेंद्रण है, जिसके बाद उत्तरी और पश्चिमी राज्यों का स्थान आता है। इसके विपरीत, पूर्वी राज्यों (बिहार, झारखंड, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल) तथा उत्तर-पूर्वी राज्यों में यह हिस्सा कम रहा है। उत्तर-पूर्वी राज्यों में ऋण की न्यून उपलब्धता का स्पष्टीकरण इस प्रकार से दिया जा सकता है कि इन राज्यों में वित्तीय समावेशन अपेक्षाकृत हलका रहा है। तथापि, सांख्यिकीय विश्लेषण यह दर्शाता है कि दक्षिणी, पश्चिमी और उत्तरी क्षेत्रों को दिये गये वृद्धिशील कृषि ऋण में असमानता में 1990 के दशक[7] की तुलना में 2000 के दशक में सीमांतिक रूप से कमी आयी है।

(ix) किसान क्रेडिट कार्डों को आरंभ करना और उनका विस्तार करना

22. किसान क्रेडिट कार्ड ऋण सुपुर्दगी की एक नयी पद्धति है, जो किसानों को एक स्थान पर पर्याप्त और समय पर ऋण एक नमनीय एवं सरल क्रियाविधि के साथ मुहैया कराती है। हाल के वर्षों में केसीसी वित्तीय समावेशन को बढ़ाने के लिए महत्त्वपूर्ण साधन सिद्ध हुआ है (चार्ट 7)। अंत-मार्च 2011 में, लगभग 10.2 मिलियन केसीसी जारी किये गये; जबकि उन पर बकाया कृषि ऋण की राशि 726 बिलियन रुपये थी। वाणिज्यिक बैंकों ने, जिनका हिस्सा जारी किये गये कुल कार्डों में 55 प्रतिशत और ऋण की राशि में 69 प्रतिशत था, ऋण की केसीसी सरणी को विस्तारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी।

23. कुछ समय पूर्व मुझे एक स्मार्ट कार्ड सहबद्ध, मोबाइल आधारित और आधार समर्थित केसीसी आरंभ करने का अवसर मिला था। यह वास्तव में आर्थिक प्राथमिकता के क्षेत्र में उपयोगकर्ता

चार्ट 6 : अल्पावधि और दीर्घावधि कृषि ऋण का हिस्सा

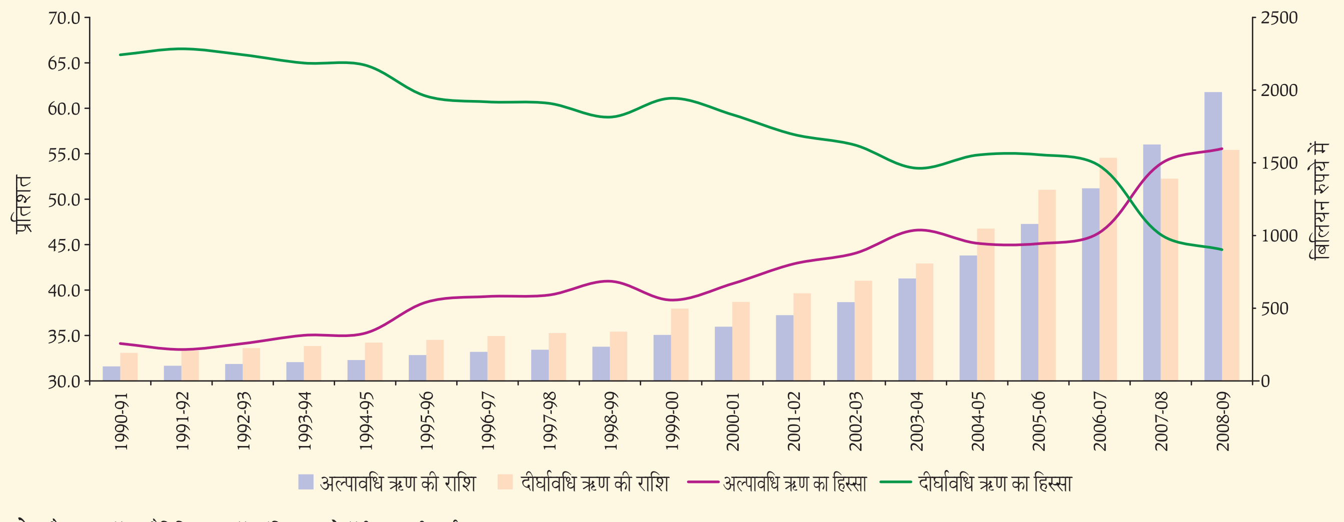

स्रोत: हैंडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी, आरबीआई (2010-11)

[7] संकेंद्रण वक्र (कुल फसल क्षेत्र में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के संचयी प्रतिशत की तुलना उसी क्षेत्र के लिए दो समयावधि, यथा, 1990-2000 और 2000-2010 में दिये गये वृद्धिशील कृषि ऋण के प्रतिशत से करते हुए) यह इंगित करता है कि दक्षिणी, पश्चिमी और उत्तरी क्षेत्रों को दिये गये वृद्धिशील कृषि ऋण में फसल क्षेत्र से संबंधित असमानता में 1990-2000 की अवधि की तुलना में 2000-2010 की अवधि में कमी आयी। राज्यवार कुल फसल क्षेत्र के आँकड़े सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के ऑनलाइन आधिकारिक डाटाबेस से लिये गये हैं। कुल फसल क्षेत्र के राज्यवार आँकड़े वर्ष 2007-08 के लिए उपलब्ध थे। विश्लेषण यह मान कर किया गया कि सभी राज्यों में कुल फसल क्षेत्र की संरचना 2000 के दशक में न्यूनाधिक एकसमान रही। कृषि-ऋण के संबंध में राज्यवार आँकड़े संबंधित वर्षों के लए भारत में वाणिज्यिक बैंकों की मूलभूत सांख्यिकीय विवरणियों से लिये गये हैं।

चार्ट 7 : जारी किये गये कुल केसीसी में संस्थाओं का हिस्सा

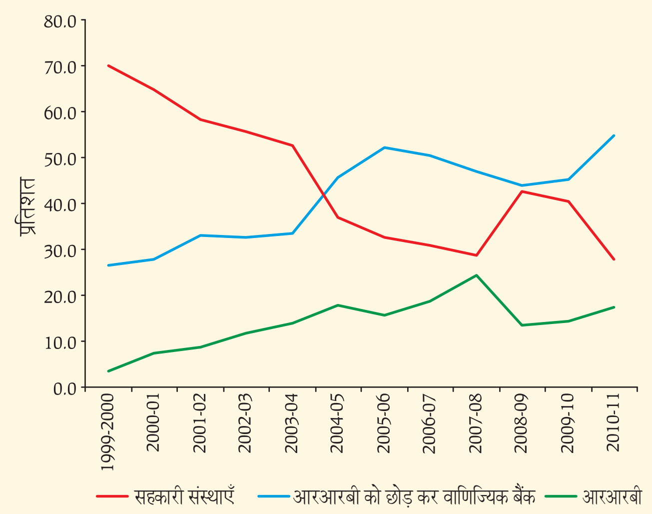

स्रोत: भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति और प्रगति की रिपोर्ट, आरबीआई (2010-11)

चार्ट 8 : सकल एनपीए अनुपात
(अंत-मार्च की स्थिति के अनुसार)

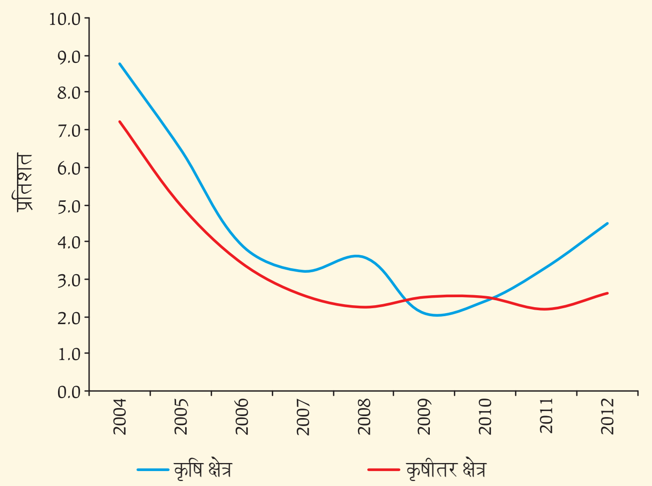

स्रोत: आरबीआई पर्यवेक्षकीय विवरणियाँ

अनुकूल अनुप्रयोगों के लिए नवीनतम प्रौद्योगिकी को काम में लाने का बड़ा उदाहरण है। मेरा मानना है कि इससे किसानों के लिए लेन देन की लागत और भी कम होगी, जिससे उत्पादकता में बढ़ोतरी होगी। इस आधुनिक नवोन्मेष के लिए मैं नाबार्ड का अभिनंदन करता हूँ।

(x) कृषि एनपीए का स्तर

24. वर्ष 2004-12 की अवधि के दौरान, कृषि में सकल एनपीए अनुपात कृषीतर क्षेत्र में तदनुकूल अनुपात से ऊँचा था, सिवाय वर्ष 2009 और 2010 में। इसका कारण अंशतः कृषि ऋण में छूट दिया जाना और राहत योजना थी। वर्ष 2011 /12 में कृषि एनपीए 47 प्रतिशत तक बढ़ गया, जबकि कृषीतर क्षेत्र का एनपीए 40 प्रतिशत तक बढ़ा। वर्ष 2011 /12 के दौरान कृषि एनपीए में बढ़ोतरी का कारण पिछले चार वर्षों (2006 /07 से 2009 /10) के दौरान कृषि ऋण में द्विअंकीय वृद्धि के विलंबित प्रभाव, सामान्य आर्थिक मंदी और संभवतः एनपीए की पहचान की नयी प्रणाली को माना जा सकता है (चार्ट 8)।

विकसित होती प्रवृत्तियों का सार

25. सारांशतः कृषि ऋण की व्यापक प्रवृत्तियाँ निम्नानुसार हैं : (i) कुल ग्रामीण ऋण में औपचारिक संस्थागत ऋण का हिस्सा बढ़ाना; (ii) कृषि ऋण की मात्रा बढ़ाना (कृषि जीडीपी में कृषि ऋण का अनुपात); (iii) कृषि के कुल संस्थागत ऋण में वाणिज्यिक बैंकों के हिस्से का बढ़ना; (iv) अप्रत्यक्ष कृषि ऋण में तेज गति से वृद्धि करना; (v) दीर्घावधि कृषि ऋण के हिस्से को कम करना; (vi) कृषि ऋण का असमान क्षेत्रीय वितरण; (vii) किसान क्रेडिट कार्डों का महत्त्व; और (viii) कृषीतर क्षेत्र की तुलना में कृषि क्षेत्र में एनपीए का उच्च स्तर। स्पष्टतः इनमें से कुछ प्रवृत्तियाँ सकारात्मक और कुछ नकारात्मक हैं।

V. आगे की ओर देखना - कृषि ऋण में चुनौतियाँ

26. संसाधन संग्रहण के संदर्भ में ग्रामीण ऋण सुपुर्दगी प्रणाली, भौगोलिक व्याप्ति और कार्यात्मक पहुँच से हुए प्रभावशाली फायदे के बावजूद ग्रामीण ऋण संस्थाओं की वित्तीय स्थिति में ह्रास होता रहा है, जिसके चलते उनकी धारणीयता के बारे में सवाल उठाये जाते हैं। कृषक परिवारों के लगभग तीन चौथाई हिस्से की अभी भी औपचारिक ऋण प्रणाली तक पहुँच नहीं है और उनके पास आय-जन्य आघातों से सुरक्षित होने के साधन नहीं हैं। इसके चलते उन्हें अनौपचारिक साहूकारों के पास जाना पड़ता है। इस पृष्ठभूमि में और कृषि ऋण की जिन प्रवृत्तियों की चर्चा मैंने इसके पूर्व की है, उस संदर्भ में मैं कृषि ऋण की आपूर्ति में आगे आने वाली चुनौतियों पर चर्चा करूँगा।

माँग-आपूर्ति अंतराल

27. सबसे बड़ी चुनौती है कृषि ऋण में माँग-आपूर्ति के बीच अंतराल। विस्तारित ग्रामीण ऋण नेटवर्क और ऋण की प्रमात्रा में वृद्धि के होते हुए भी माँग और आपूर्ति के बीच अंतराल बढ़ता रहा है। स्थूल गणना (सारणी 2) दर्शाती है कि वर्ष 2002 /03 और 2007 /08 की अवधि के दौरान जब कृषि जीडीपी प्रतिवर्ष लगभग 3 प्रतिशत की औसत दर से बढ़ी, तब कुल संस्थागत कृषि-ऋण

सारणी 2 : कृषि ऋण : माँग-आपूर्ति अंतराल

वर्ष	कुल कृषि ऋण की वास्तविक आपूर्ति (बिलियन रुपये)	कृषि ऋण के लिए अनुमानित माँग (बिलियन रुपये)	माँग-आपूर्ति अंतराल (प्रतिशत में)
2002-03	2562	2665	4.0
2003-04	3004	3260	8.5
2004-05	3583	3811	6.4
2005-06	4411	4944	12.1
2006-07	5361	6745	25.8
2007-08	5817	7741	33.1
औसत (ज्यामितीय माध्य)			14.0

टिप्पणी : हैंडबुक ऑफ स्टैटिस्टिक्स ऑन इंडियन इकोनॉमी में प्रकाशित आँकड़ों के आधार पर गणना की गयी है।

में माँग-आपूर्ति अंतराल लगभग 14 प्रतिशत अनुमानित था (कृषि ऋण की वास्तविक आपूर्ति के अनुपात के रूप में)[8]। स्पष्टतः, यदि कृषि-क्षेत्र 3 प्रतिशत से अधिक की तेज गति से बढ़ा होता, तो कृषि-ऋण में माँग-आपूर्ति अंतराल और बड़ा हुआ होता।

ऋण की लागत

28. कृषि ऋण की लागत सामान्यतः ऊँची रही है। कृषि के लिए भारित औसत उधार दर (डब्लूएएलआर) (जो निधियों की लागत और अन्य परिवर्धनों की लागत, यथा, पूँजी /प्रावधानन की लागत, सांविधिक निर्धारण और लाभ मार्जिन के अतिरिक्त लेन-देन की लागत को प्रतिबिंबित करती है) और बैंकिंग प्रणाली के सकल डब्लूएएलआर की तुलना करने पर कृषि में ब्याज दर के लिए किसी सुव्यक्त ऊर्ध्वमुखी पूर्वाग्रह का साक्ष्य नहीं मिलता है। कृषि का डब्लूएएलआर 1990 के दशक के आरंभ में सकल डब्लूएएलआर की तुलना में कम था, लेकिन इसका फायदा, भले ही वह कम हो, वर्ष 2000 तक पूरी तरह क्षय हो गया, जिसके बाद कृषि ऋण के लिए डब्लूएएलआर में सकल डब्लूएएलआर के अनुरूप चलने की प्रवृत्ति बनी (चार्ट 9)।

[8] कृषि ऋण के लिए अनुमान युगपत माँग-आपूर्ति समीकरण प्रणाली के भीतर लगाया जाता है, जिसमें वर्ष 1997 से 2007 तक के आँकड़े दिये गये हैं, और दो प्रक्रम वाली लीस्ट स्क्वेयर क्रियाविधि का प्रयोग किया गया है। इस प्रणाली में बहिर्मुख वैरिएबलों को, उनके अंतराल और स्तर पर, साधन के रूप में नियोजित किया गया है। माँग-आपूर्ति अंतराल निकालने के लिए यह मान लिया गया है कि कृषि जीडीपी प्रतिवर्ष 3 प्रतिशत की दर से बढ़ती है, जो वर्ष 2002-03 से 2007-08 तक की अवधि के दौरान वास्तविक औसत वृद्धि दर थी। कृषि ऋण के लिए माँग समीकरण के अनुमानित गुणांक का प्रयोग कृषि जीडीपी में किया गया, जिसमें इस धारणा को शामिल किया गया, जिससे कृषि ऋण के लिए माँग का वह अनुमान निकलकर आया, जो इस अवधि के दौरान प्रचलित था।

चार्ट 9 :कृषि का तुलनात्मक डब्लूएएलआर (ब्याज दर अनुदान के लिए समायोजित) और कुल बैंक ऋण का डब्लूएएलआर

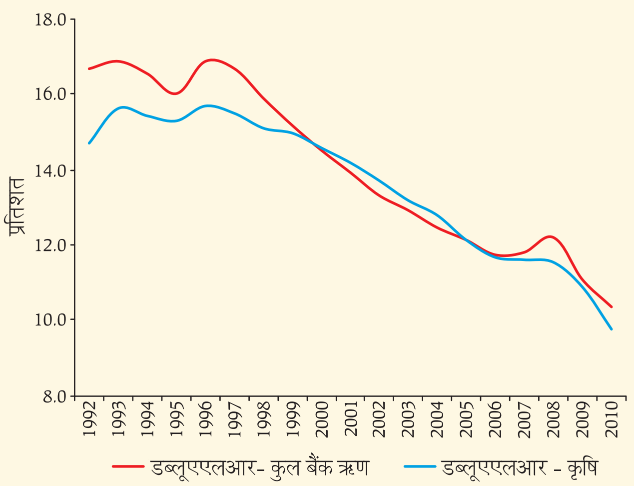

29. यह जानना रोचक होगा कि वर्ष 2006-07 में कृषि ऋण के लिए ब्याज अनुदान योजना आरंभ किये जाने के बाद कृषि ऋण के डब्लूएएलआर में कोई महत्त्वपूर्ण गिरावट नहीं हुई; यह केवल सीमांतिक रूप से सकल डब्लूएएलआर से नीचे बना रहा। कृषि ऋण के डब्लूएएलआर में अवरुद्धता के लिए आंशिक स्पष्टीकरण यह हो सकता है कि कृषि ऋण में पूरी आपूर्ति और उत्पादन शृंखला, यथा, वेयरहाउसिंग, कोल्ड स्टोरेज, निविष्टि उत्पादक और ट्रैक्टर के साथ संबद्ध कार्यकलापों के लिए उधार शामिल होता है, जिसके लिए ब्याज अनुदान अपेक्षित नहीं होता। लेकिन इसे पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं माना जा सकता, क्योंकि कृषि ऋण का अधिकांश हिस्सा अभी भी प्रत्यक्ष उधार ही होता है।

30. हमें यह समझने के लिए कि क्या ब्याज अनुदान योजना कृषि ऋण के प्रवाह को विकृत कर रही है, और अधिक अध्ययन की आवश्यकता होगी। जनश्रुतिमूलक साक्ष्य बताता है कि कुछ कृषि ऋण, जिन्हें अनुदान के चलते बाजार से कम दर पर दिया जाता, को कृषीतर प्रयोजनों की ओर मोड़ दिया जाता है। यह स्पष्ट रूप से अनुदान योजना के उद्देश्य को विफल करता है और इसे सही करने के लिए या तो अनुदान योजना को नया रूप देने या कृषि ऋण के अंतिम उपयोग पर कड़ी निगरानी रखने की आवश्यकता होगी।

लेन-देन लागत

31. जनश्रुतिमूलक साक्ष्य बताता है कि कृष क्षेत्र को ऋण की सहज सुपुर्दगी में अनेक कारक बाधा बनते हैं। ये हैं : (i) संपार्श्विक पर

जोर देना, (ii) ऋण प्रशासन की जटिल क्रियाविधियाँ, (iii) गाँव से बैंक शाखा की दूरी, (iv) उच्चतर निगरानी और अनुवर्ती लागत, (v) बैंक अधिकारियों और किसानों के बीच संस्कृति-जन्य अंतर, (vi) राजनीतिक हस्तक्षेप, (vii) उधार की कठोर नीतियाँ और क्रियाविधियाँ, जिनमें बोझिल प्रलेखन शामिल है, (viii) अतिदेय ऋणों की वसूली में कठिनाई, (ix) उपभोग ऋण का प्रावधान नहीं होना, (x) ऋण जोखिम से बचाव की कारगर प्रणाली का नहीं होना, और (xi) एक अनुचित विश्वास कि कृषि क्षेत्र के उधारकर्ता, विशेष रूप से न्यून प्रति व्यक्ति आय वाले लघु और सीमांत कृषक, जोखिमपूर्ण होते हैं और इसलिए बैंक के लिए लाभप्रद नहीं होते। प्रकट रूप से, इनमें से कुछ कारकों के चलते लेन-देन की लागत ऊँची हो जाती है, जिसमें उधारकर्ताओं का मूल्यांकन करने में खर्च हुई राशि, संसाधन, प्रलेखन एवं वितरण प्रभार, ऋण की निगरानी /पर्यवेक्षण और वसूली तथा शाखा, मंडल एवं प्रधान कार्यालय के खर्च के लिए आनुपातिक रूप से बाँटी गयी राशि शामिल है। स्पष्ट रूप से कहा जाये, तो यह आवश्यक है कि कृषि क्षेत्र के अंतिम उधारकर्ता को ऋण सुपुर्दगी और निधियों की लागत कम करने के लिए लेन-देन की लागत को कम किया जाये।

लाइसेंस रहित सहकारी बैंक

32. लाइसेंस रहित सहकारी बैंको की ह्रासमान वित्तीय स्थिति चिंता का एक विषय है। 31 मार्च 2009 को देश में 402 ग्रामीण सहकारी बैंकों में से 313 लाइसेंस रहित थे। वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन से संबंधित समिति ने यह सिफारिश की कि 31 मार्च 2012 के बाद देश में किसी भी लाइसेंस रहित सहकारी बैंक को कार्य करने की अनुमति नहीं दी जानी है। बीच के तीन वर्षों की अवधि में आरबीआई और नाबार्ड ने साथ मिल कर कार्य करते हुए इनमें से 270 बैंकों को लाइसेंस दिये, कुछ मामलों में लाइसेंसीकरण मानदंडों को शिथिल करते हुए। इस प्रकार, 1 अप्रैल 2012 को ऐसे 43 सहकारी बैंक बच गये, जो शिथिलीकृत लाइसेंसीकरण मानदंडों को भी पूरा नही कर पाये थे। सहकारिता प्रणाली की अखंडता को बनाये रखने और जनता के हितों की रक्षा करने के लिए रिज़र्व बैंक ने इन 43 बैंकों के संबंध में निदेश जारी किये, जिनमें उन्हें नयी जमाराशियाँ स्वीकार करने से मना किया गया था[9]। ये निदेश मौजूदा खाताधारकों के साथ सामान्य परिचालन करने में इन बैंकों पर कोई रोक नहीं लगाते हैं।

33. रिज़र्व बैंक के वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड ने निदेश दिया कि अभी तक लाइसेंस रहित इन बैंकों को 30 सितंबर 2012 तक छह महीनों का समय दिया जाये, ताकि ये पात्रता मानदंड को पूरा करने के लिए एक निगरानीयोग्य कार्ययोजना तैयार कर सकें। जिन राज्यों में ये लाइसेंसरहित बैंक अवस्थित हैं, उनमें रिज़र्व बैंक के क्षेत्रीय कार्यालयों को कहा गया है कि वे कार्यदल गठित कर इन बैंकों द्वारा लाइसेंसीकरण मानदंड पूरा करने की दिशा में की गयी प्रगति पर निगरानी रखें। इन बैंकों पर निदेश अधिरोपित करने में, जिसमें उन्हें नयी जमाराशियाँ स्वीकार करने से मना किया गया था, रिज़र्व बैंक जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करने की आवश्यकता से अधिक निदेशित हुआ था और यह निर्णय लोकहित में लिया गया था।

कृषि विस्तार

34. ऋण का प्रावधान देश में कृषि उत्पादन में सुधार करने के लिए आवश्यक होता है, लेकिन यही पर्याप्त नहीं। ऋण के साथ-साथ किसानों में अनुसंधान और जानकारी का प्रसार करना भी जरूरी होता है। 1,060 और 1970 के दशकों में भारत में एक कृषि विस्तार सेवा का परिचालन होता था, जिसने प्रयोगशाला से प्राप्त अनुभव को भूमि तक रूपांतरित करने का प्रशंसनीय कार्य किया था। 1970 के दशक में भारत सरकार ने कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम आरंभ किया, ताकि कृषि उत्पादकता में सुधार करने के लिए मौजूदा सिंचाई सुविधाओं का पूरा उपयोग किया जा सके। इस अवधि के दौरान विश्व बैंक द्वारा वित्तपोषित ट्रेनिंग एंड विजिट (टी एंड वी) सिस्टम ने भी कृषि विस्तार सेवा के देश-व्यापी प्रयासों को एक करते हुए और किसानों को नियमित संदेश देते हुए, खास कर हरित क्रांति प्रोद्योगिकी के संबंध में, कृषि-विस्तार के सुदृढ़ीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी।

35. वर्षों से, विस्तार नेटवर्क अनेक कारणों से छिन्न-भिन्न हो गया है। आज के 'सूचना युग' में उत्पादकता को बढ़ाये जाने की कुंजी दुनिया में सर्वोत्तम व्यवहारों से सीख ग्रहण करना और स्थानीय स्थितियों के अनुसार उनका अनुकूलन करना है - ['वैश्विक स्तर पर सोचें और स्थानीय जरूरतों के अनुसार कार्य करें'] इसका सार तत्व है। कृषि विस्तार प्रणाली का पुनर्निर्माण, जो भारत की शिक्षा-संस्कृति के लिए सुविज्ञ, उत्साही और संवेदनशील हो, अभी भी चुनौती बना हुआ है।

वर्षा-सिंचित कृषि का संवर्धन करने के लिए ऋण

36. भारत में लगभग 65 प्रतिशत खेती वर्षा-सिंचित होती है, जो अधिकतकर छोटे और सीमांत किसानों द्वारा की जाती है। स्पष्टतः, यहाँ उत्पादकता में सुधार करना समग्र कृषि वृद्धि के लिए महत्त्वपूर्ण होता है। हम प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत की दर से कृषि में निरंतर वृद्धि नहीं

[9] निदेशों को अध्यारोपित किये जाने के बाद दो सहकारी बैंकों ने लाइसेंसीकरण मानदंडों को पूरा किया। उन पर अधिरोपित निदेश वापस ले लिये गये और उन्हें लाइसेंस जारी करने की प्रक्रिया चल रही है।

कर सकते हैं, यदि हम अनुसंधान और वर्षा-सिंचित क्षेत्रों में कृषि ऋण पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं करें।

37. वर्षा-सिंचित क्षेत्रों में अधिक तगड़े मौसम बीमा और कृषि विस्तार सेवाओं की भी आवश्यकता होगी, ताकि उनमें विविधीकृत जीविका विकल्पों को लक्ष्य बनाया जाये। चूँकि वर्षा-सिंचित कृषि के लिए ऋण के मूल्यांकन और वितरण हेतु एक अलग उन्मुखता और दृष्टिकोण अपेक्षित है, अतः नवोन्मेषी ऋण-उत्पादों की डिजाइन बनाना भी आवश्यक है। ऐसे उत्पाद वर्षा-सिंचित कृषि में बैंकों के भरोसे को स्थापित करने में मददगार होंगे और वे यह भी सुनिश्चित करेंगे कि इन क्षेत्रों के लघु और सीमांत कृषकों की विराट संख्या का वित्तीय और आर्थिक समावेशन किया जाता है।

ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ)

38. ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ) की स्थापना वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र उधार में कमी की राशि के लिए रिपोजिटरी के रूप में नाबार्ड में वर्ष 1995 में की गयी थी। आरआइडीएफ से निधियाँ ग्रामीण आधारभूत संरचना परियोजनाओं का कार्यान्वयन करने के लिए राज्य सरकारों को उधार दी जाती हैं। प्रारंभ में उद्देश्य यह था कि इन निधियों को 'अंतिम चरण' के निधीयन अंतराल के वित्तपोषणके लिए आबंटित किया जाये, अर्थात्, उन परियोजनाओं के लिए धन उपलब्ध कराया जाये, जो लगभग पूरी हो गयी हों, लेकिन पूर्ण रूप से पूरी नहीं हुई हों। अभिप्राय यह था कि इससे यह सुनिश्चित होगा कि विफल निवेश पूरा बोझ नहीं बने और समग्र दक्षता में सुधार हो। कालांतर में राज्य सरकारों की माँग के आगे झुकते हुए आरआइडीएफ निधीयन अब सभी प्रकार की ग्रामीण आधारभूत संरचना परियोजनाओं के लिए उपलब्ध होती है और 'अंतिम चरण' के निधीयन वाले उद्देश्य को हलका कर दिया गया है। मुझसे कहा गया है कि आरआइडीएफ द्वारा निधि-प्रदत्त अनेक परियोजनाएँ भी समय से पूरा नहीं हो रही हैं। यह महत्त्वपूर्ण होगा कि बैंकों और राज्य सरकारों, दोनों के लिए अभिप्रेत प्रोत्साहन ढाँचे की और परिचालन दिशा-निर्देशों की भी समीक्षा की जाये।

समाहार

39. अब मैं अपनी बात समाप्त करना चाहता हूँ। यह पिष्टोक्ति है; फिर भी यह बात दुहराने लायक है कि कृषि भारत की भावनात्मक और आर्थिक खुशहाली को परिभाषित करती है। सच है, जीडीपी में कृषि का हिस्सा 15 प्रतिशत से कम है, लेकिन यह तब भी आधी आबादी से अधिक लोगों से प्रत्यक्ष जुड़ा हुआ है, जिनका आर्थिक भविष्य कृषि के कार्यसंपादन से जुड़ा हुआ है। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार '42 विकासशील देशों के बीच, वर्ष 1981-2003 की अवधि में, कृषि में हुई एक प्रतिशत वृद्धि ने तीन दशमिक निर्धनतम लोगों के खर्च को उस वृद्धि से, जो शेष अर्थव्यवस्था में हुई थी, कम से कम 2.5 गुणा बढ़ा दिया[10]। इससे यह स्पष्ट होता है कि समावेशी वृद्धि और गरीबी घटाने की हमारी खोज की कुंजी कृषि है।

40. हमारे कृषि क्षेत्र के कार्यसंपादन में सुधार करने के लिए हमें बहुत कुछ करना होगा; इनमें से एक महत्त्वपूर्ण कार्य होगा कृषि ऋण के प्रवाह को सुधारना। इसके लिए तीनों संस्थागत खंडों - वाणिज्यिक बैंक, आरआरबी और सहकारी संस्थाओं को प्रयास करना होगा। वाणिज्यिक बैंकों को नये-नये तरीके तलाश कर किसानों तक पहुँचना होगा, आरआरबी को अपने तुलनात्मक फायदे का लाभ उठाना होगा और सहकारी संस्थाओं को अपने नियंत्रण ढाँचे में सुधार करना होगा। कृषि ऋण की प्रमुख सार्वजनिक संस्था के रूप में नाबार्ड की भूमिका इस संबंध में महत्त्वपूर्ण है।

41. नाबार्ड क्या करता है और कितने अच्छे तरीके से करता है, यह हमारे कृषि क्षेत्र के लिए महत्त्वपूर्ण होगा। इस 30वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर नाबार्ड के अध्यक्ष, निदेशक मंडल, प्रबंधन तंत्र और स्टाफ के सदस्यों को कृषि ऋण की चुनौतियों को पूरा करने के लिए अशेष शुभकामनाएँ।

[10] विश्व बैंक की वर्ल्ड डेवलपमेंट रिपोर्ट (2001)(अध्याय :ग्रोथ एंड पोवर्टी रिडक्शन इन एग्रीकल्चर्स थ्री वर्ल्ड्स)